RNI No.: RAJBIL/2013/54153

ISSN : 2322-0074

अलख दृष्टि

ALAKH DRISHTI

(भाषा, दर्शन, साहित्य, संस्कृति एवं मानविकी की संवाहिका त्रैमासिक शोध पत्रिका)

वर्ष-1 ● अंक-02 ● त्रैमासिक ● अप्रेल-जून, 2016

Scanned with CamScanner

साम्प्रदायिक एकता का मूल मंत्र अनेकान्त

डॉ. समणी संगीतप्रज्ञा

जैन-आगमों की अनुश्रुति के अनुसार प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के समय में विभिन्न सम्प्रदाय नहीं होने से साम्प्रदायिक-मतभेद की स्थिति नहीं थी, तब विद्वेष की संभावना तो और भी नगण्य रही होगी। कहा जाता है कि आदि तीर्थंकर ऋषभदेव के पौत्र एवं चक्रवर्ती भरत के पुत्र कुमार मरीचि के द्वारा विविध जन्म-जन्मान्तरों के प्रवाह-क्रम में सांख्यादि तीन सौ तिरसठ मतों का प्रचार किया गया। यह कार्य सुदीर्घकाल क्रम में हुआ। अतः यह हम कह सकते हैं कि वैचारिक एवं साम्प्रदायिक-मतभेद कुमार मरीचि के निमित्त से परवर्तीकाल में उत्तरोत्तर बढ़ते गए।

तीर्थंकरों की परम्परा में साम्प्रदायिक एवं वैचारिक-मतभेद उत्तरोत्तर अवश्य बढ़े थे, तथा इनके परिणामस्वरूप प्ररूपणों में भी निरन्तर विविधता आई थी। इतना होने पर भी चूंकि वे प्ररूपणायें व्यापक-चिन्तन की प्रक्रिया से प्राप्त विचारधाराओं के रूप में अधिक थी, अतः उन्हें आधुनिक दार्शनिकों एवं विचारकों ने उस चिन्तन प्रक्रिया के स्तम्भ स्कूल के रूप में मान्यता दी है, क्योंकि वैचारिक मतभेद होने पर भी व्यावहारिक मतभेद की स्थिति उस समय नहीं थी। क्रमशः क्रोधादि कषायों की प्रबलता तथा धार्मिक-महापुरूषों के सान्निध्य से मिलने वाले तात्त्विक-चिन्तन की विरलता के कारण धीरे-धीरे ये वैचारिक मतभेद 'मनभेद' का आकार ग्रहण करने लगे तथा क्षुद्र-स्वार्थों की प्रबलता के कारण यह स्थिति क्रमशः साम्प्रदायिक एवं वैचारिक-विद्वेष की स्थिति के रूप में निर्मित होने लगी।

अनेकांत के समर्थक जैनाचार्यों ने इसी धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया हैं आचार्य हरिभद्र की धार्मिक सहिष्णुता तो सर्वविदित है। अपने ग्रंथ शास्त्रवार्ता समुच्चय में उन्होंने बुद्ध के अनात्मवाद, न्याय दर्शन के ईश्वर कर्तृत्ववाद और वेदांत के सर्वात्मवाद में भी संगति दिखाने का प्रयास किया। अपने ग्रंथ लोकतत्त्व संग्रह में आचार्य हरिभद्र लिखते हैं-

पक्षपातो न मे वीरे न द्वेष कपिलादिषु
युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्य परिग्रहः।

मुझे न तो महावीर के प्रति पक्षपात है और न कपिलादि मुनिगणों के प्रति द्वेष है जो भी वचन तर्क-संगत हो उसे ग्रहण करना चाहिए।

अतः साम्प्रदायिक क्रूरता अतीत में भी रही है, आज भी है। अतीत में भी एक सम्प्रदाय ने दूसरे सम्प्रदाय में विद्यमान असत्यांश देखने का दृष्टिकोण विस्तृत किया, उसके प्रति जनता में घृणा का भाव उभारा। आज भी ऐसा हो रहा है। फलतः साम्प्रदायिक संघर्ष की चिनगारी समय-समय पर उफनती रहती है। इस समस्या का सर्वोत्तम समाधान है- दूसरों में विद्यमान सत्यांश को ग्रहण करने वाली दृष्टि का विकास। और वह दृष्टि है 'अनेकान्त'। इसी चिन्तन के क्षणों में काका कालेलकर ने कहा था- 'आज के विश्व को अनेकान्त की जरूरत है।

आज हम अनेकान्त के सैद्धान्तिक पक्ष पर विचार-विमर्श नहीं करते हुए उसके व्यावहारिक पक्ष की ही चर्चा कर रहे हैं, क्योंकि चिन्तन का विषय ही ऐसा है जिसमें व्यावहारिक पक्ष को ही उजागर करने पर विषय का प्रतिपादन भलिभाँति हो सकता है। हम देखते हैं कि अनेकान्त के सिद्धान्त दार्शनिक, धार्मिक, साम्प्रदायिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं पारिवारिक जीवन के विरोधों के समन्वय की एक ऐसी विधायक दृष्टि प्रस्तुत करते हैं- जिससे मानव-जाति को धर्म के नाम पर होने वाले संघर्षों के निराकरण में सहायता मिल सकती है।

इतिहास साक्षी है कि साम्प्रदायिक-विद्वेष के कारण जितना विध्वंस हुआ है, उतना संभवतः बड़े से बड़े विवाद में भी नहीं हुआ। क्योंकि महायुद्धों की अवधि हमेशा सीमित रही है। जबकि साम्प्रदायिक-विद्वेष के कारण चलने वाले विध्वंसात्मक कार्य कभी भी समय की सीमा में मर्यादित नहीं किए जा सके हैं। इसी प्रकार भौतिक-युद्धों के कारण तार्किकरूप से व्याख्यायित किए जा सकते हैं। किन्तु साम्प्रदायिक-विद्वेषों में परिस्थितियों की तार्किकपरिणति के बारे में किसी की जिज्ञासा नहीं रहती है, अपितु उनमें मात्र साम्प्रदायिक-पूर्वाग्रह ही प्रेरक-तत्व होता है। अतः इनके विध्वंस की प्रक्रिया अनवरत, अप्रत्याशित एवं असीमित विध्वंसवाली होती है। अतः विध्वंस की इस परम्परा में पारस्परिक-संवाद ही समाधान का रास्ता दिखा सकते है तथा उस पारस्परिक-संवाद के लिए स्याद्वाद जैसी भाषिक-सहिष्णुता की शैली, नय जैसी अभिप्राय को स्पष्ट करने वाली पद्धति तथा सप्तभंगी के प्रयोग जैसी समस्त आशंकाओं को निर्मूल कर देने वाली प्रक्रिया ही सर्वाधिक उपयुक्त-साधन के रूप में दृष्टिगत होती है। अतः वर्तमान साम्प्रदायिक-विद्वेष की स्थिति में स्याद्वाद, नय एवं सप्तभंगी जैसे सिद्धान्तों की उपयोगिता स्पष्टरूप से प्रतिभापित होती है।

अनेकान्त के प्रयोग के तीन सूत्र हैं- सापेक्षता, समन्वय और सह-अस्तित्व।

सापेक्षता– अनेकान्त का प्रथम सूत्र सापेक्षता है। इसके अनुसार एक पर्याय अथवा एक विचार को समग्र मान लेना, निरपेक्ष मान लेना, एकांतवादी दृष्टिकोण है। एक विचार को अपूर्ण और सापेक्ष मान लेना अनेकान्तवादी दृष्टिकोण है। सम्यक् दर्शन का विकास अनेकान्त दृष्टि के आधार पर हो सकता है। अनेकान्त की मौलिक दृष्टियां दो हैं- सापेक्ष और निरपेक्ष। अस्तित्त्व का निर्धारण करने के लिए निरपेक्ष दृष्टि का प्रयोग करना चाहिए। संबंधों का निर्धारण करने के लिए सापेक्ष दृष्टि का प्रयोग करना चाहिए। साम्प्रदायिक एकता के लिए सापेक्षता को अपनाया जाये तो स्वयमेव विरोध का ताना-बाना समाप्त किया जा सकता है।

समन्वय - अनेकान्त का दूसरा सूत्र है- समन्वय। भिन्न प्रतीत होने वाले दो वस्तु धर्मों में एकता की खोज का सिद्धान्त है- समन्वय।

सह-अस्तित्व - यह अनेकान्त का तीसरा सूत्र है। जिसका अस्तित्व है। उसका प्रतिपक्ष अवश्यंभावी है- यत् सत् तत् प्रतिपक्षम्। एक धार्मिक विचारधारा के लोग यह सोचें कि मेरे धर्म की विचारधारा को मानने वाला ही इस दुनिया में रहे, शेष सबको समाप्त कर दिया जाए - इस विचारधारा ने धार्मिक जगत की पवित्रता को नष्ट किया है। अहिंसा, मैत्री, भाईचारा ये धर्म के प्रमुख अवदान हैं। सह-अस्तित्व का सिद्धान्त सहिष्णुता और वैचारिक स्वतंत्रता का मूल्य स्वीकार करता है। यदि सभी सम्प्रदाय के लोग अनेकान्त के इन तीन मुख्य सिद्धान्त-सापेक्षता, समन्वय और सह-अस्तित्व को समझ लें और इसे जीवन व्यवहार में अपनायें तो निश्चय ही साम्प्रदायिक एकता को स्थापित किया जा सकता है। अनेकान्त सिद्धान्त अनेकता में

Scanned with CamScanner